7

# देवी सूक्त/वाक् सूक्त

प्रिय शिक्षार्थी पूर्व पाठ में आपने स्वस्ति सूक्त के विषय में जाना। इस पाठ में आप देवी सूक्त/वाक् सूक्त के माध्यम से वाक् का महत्त्व जान पायेंगे। जिन शब्दों का हम उच्चारण (बोलते) करते हैं उन्हे ऋग्वेद में देवी के रूप में माना गया है। वहां पर इसकी विशेषताएं और पद्धति के विषय में बताया गया है। ऋग्वेद के दसवें मण्डल में 125 वां सूक्त देवी अर्थात् वाक् सूक्त है। मंत्रों के ऋषि वाक् है और उनकी पुत्री अम्भूणा है। इस तरह पूरा नाम वागम्भरणी है। देवता का नाम भी वागम्भरणी है। अर्थात् सूक्त् के दृश्य में ऋषि को चिह्नित किया जा सकता है।

## उद्देश्य

यह पाठ पढ़ने के बाद आप सक्षम होंगे:

- स्वस्ति सूक्त का उच्चारण कर पाने में; और
- स्वस्ति सूक्त का अर्थ ज्ञान कर पाने में ।

## 7.1 देवी सूक्त/वाक् सूक्त

अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चराम्यहमादित्यैरुत विश्वदेवैः।

अहं मित्रावरुणोभा बिभर्म्यहमिन्द्राग्नी अहमश्विनोभा॥

aham rudrebhir vasubhiś carāmy aham ādityair uta viśvadevaiḥ |

aham mitrāvaruṇobhā bibharmy aham indrāgnī aham aśvinobhā ||

मैं महान् परमात्मा की वाक्–ज्ञानशक्ति पृथिवी आदि आठ वसुओं से, ग्यारह प्राणों से, बारह मासों के साथ और ऋतुओं के साथ प्राप्त होती हूँ। मैं दोनों दिन रात, अग्नि विद्युत् को और दोनों द्युलोक पृथिवीलोक को धारण करती हूँ ।।१।।

अहं सोममाहनसं बिभर्म्यहं त्वष्टारमुत पूषणं भगम्।

अहं दधामि द्रविणं हविष्मते सुप्राव्ये३ यजमानाय सुन्वते॥

aham somam āhanasam bibharmy aham tvaṣṭāram uta pūṣaṇam bhagam |

aham dadhāmi draviṇam haviṣmate suprāvye yajamānāya sunvate ||

मैं दृष्टिदोष को नष्ट करने वाले या अशान्तिनाशक चन्द्र को धारण करती हूँ। मैं सूर्य को और वायु तथा भजनीय यज्ञ को धारण करती हूँ। मैं हवि देनेवाले के लिये, विद्वानों को भोजनादि से अच्छी प्रकार प्रकृष्टता से तृप्त करने वाले के लिये, विद्वानों के पानार्थ सोमरस निकालने वाले के लिये, यजमान आत्मा–के लिये दान के लिये धन को धारण करती हूँ ।।२।।

अहं राष्ट्री संगमनी वसूनां चिकितुषी प्रथमा यज्ञियानाम्।

तां मा देवा व्यदधुः पुरुत्रा भूरिस्थात्रां भूर्यावेशयन्तीम्॥

ahaṃ rāṣṭrī saṃgamanī vasūnāṃ cikituṣī prathamā yajñiyānām |

tām mā devā vy adadhuḥ purutrā bhūristhātrām bhūry āveśayantīm ||

मैं जगद्रूप राष्ट्र की स्वामिनी हूँ समस्त धनों की सङ्गति कराने वाली तथा प्राप्त कराने वाली, श्रेष्ठ कर्मों की प्रथम–प्रमुख चेताने वाली हूँ। बहुरूप स्थितिवा ली जड़ जङ्गम पदार्थों में बहुरूप से आवेश करती हुई, ऐसी मुझको ज्ञानी जन बहुत रूपों में वर्णन करते हैं ।।३।।

मया सो अन्नमत्ति यो विपश्यति यः प्राणिति य ईं शृणोत्युक्तम्।

अमन्तवो मां त उप क्षियन्ति श्रुधि श्रुत श्रद्धिवं ते वदामि॥

mayā so annam atti yo vipaśyati yaḥ prāṇiti ya īṃ śṛṇoty uktam |

amantavo māṃ ta upa kṣiyanti śrudhi śruta śraddhivaṃ te vadāmi ||

मेरे द्वारा स्वीकृत भोजन वह खाता है। जो विशेष देखता है, जो प्राण

लेता है, जो ही कहे हुए को सुनता है, मुझे न मानने वाले हैं वे उपक्षय–नाश को प्राप्त होते हैं। तुझे श्रद्धायुक्त सत्यवचन कहती हूँ हे विश्रुत–प्रसिद्ध तुम ध्यान से सूनो। ।।४।।

अहमेव स्वयमिदं वदामि जुष्टं देवेभिरुत मानुषेभिः।

यं कामये तंतमुग्रं कृणोमि तं ब्रह्माणं तमृषिं तं सुमेधाम्॥

aham eva svayam idaṃ vadāmi juṣṭaṃ devebhir uta mānuṣebhiḥ |

yaṃ kāmaye taṃ-tam ugraṃ kṛṇomi tam brahmāṇaṃ tam ṛṣiṃ taṃ sumedhām ||

मैं स्वयं यह कहती हूँ कि ऋषियों द्वारा और मनुष्यों द्वारा सेवन करने योग्य को, जिसको चाहती हूँ, पात्र मानती हूँ, उस को देवता, उसे ऋषि, उसे अच्छी बुद्धिवाला बनाती हूँ ।।५।।

अहं रुद्राय धनुरा तनोमि ब्रह्मद्विषे शरवे हन्तवा उ।

अहं जनाय समदं कृणोम्यहं द्यावापृथिवी आ विवेश॥

ahaṃ rudrāya dhanur ā tanomi brahmadviṣe śarave hantavā u |

ahaṃ janāya samadaṃ kṛṇomy ahaṃ dyāvāpṛthivī ā viveśa ||

विद्वानों ब्राह्मणों के प्रति द्वेष भाव रखने वाले क्रूर तथा हिंसक का हनन करने के लिए मैं धनुषशस्त्र को साधती हूँ। लोककल्याण के लिए मैं अहङ्कारी के साथ संग्राम करती हूँ। मैं द्यावापृथिवी में भलीभाँति प्रविष्ट होकर रहती हूँ ।।६।।

अहं सुवे पितरमस्य मूर्धन्मम योनिरप्स्वन्तः समुद्रे।

ततो वि तिष्ठे भुवनानु विश्वोतामूं द्यां वर्ष्मणोप स्पृशामि॥

aham suve pitaram asya mūrdhan mama yonir apsv antaḥ samudre |

tato vi tiṣṭhe bhuvanānu viśvotāmūṃ dyāṃ varṣmaṇopa spṛśāmi ||

इस जगत् के मूर्धारूप उत्कृष्ट भाग में स्थित पालक सूर्य को मैं उत्पन्न करती हूँ। मेरा घर व्यापनशील परमाणुओं में तथा अन्तरिक्ष महान् आकाश तथा मै सारे लोकलोकान्तरों को व्याप्त होकर रहती हूँ। इसी कारण द्युलोक के प्रति वर्षणधर्म से सङ्गत होती हूँ ।।७।।

अहमेव वात इव प्र वाम्यारभमाणा भुवनानि विश्वा।

परो दिवा पर एना पृथिव्यैतावती महिना सं बभूव॥

aham eva vāta iva pra vāmy ārabhamāṇā bhuvanāni viśvā |

paro divā para enā pṛthivyaitāvatī mahinā sam babhūva ||

मैं सब लोक–लोकान्तरों का निर्माण करती हुई या निर्माण के हेतु वेगवाली वायु के समान प्रगति करती हूँ। द्युलोक से परे इस पृथ्वी से परे अपने महत्त्व से इतने गुण सम्पन्न वाली आम्भृणी वाणी हूँ, सम्यक् सिद्ध हूँ ।।८।।

## पाठगत प्रश्न– 7.1

(1). नीचे दिये गये प्रश्नों का उत्तर लिखिए–

(i) कौन देव बनाती हैं?

(ii) पशु क्या बोलते हैं?

(iii) वाक् कितने पदों में परिमित हैं?

(iv) तुरीयं वाक् कौन बोलते हैं?

## आपने क्या सीखा?

- वाक् का महत्त्व।
- वाक् सूक्त का उच्चारण।
- वाक् सूक्त का अर्थज्ञान।

## पाठांत प्रश्न

1. वाक् सूक्त का महत्त्व अपने शब्दों में लिखिए।

Reference:

1. Rig Veda

## उत्तरमाला

7.1

(1)

1. वाक्
2. उपरी वाणी
3. चाट
4. मनुष्य